

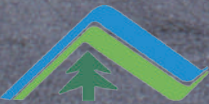
पं० गोविन्द बल्लभ पंत

स्मारक व्याख्यान: XXVIII

डा० नवीन चुयाल

सितंबर 10, 2022

कोसी – कटारमल, अल्मोड़ा



गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान

(भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान)

कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड (263 643)



Dr. Navin Juyal

- Former Senior Scientist, Physical Research Laboratory, Ahmedabad, Gujarat
- Fellow of the Indian Geophysical Union
- Fellow of the Geological Society of India

Specialization:

- Geomorphology and Quaternary Geology
- Paleoclimate and Climate Extremes

Awards & Recognitions:

- Recipient of National Geoscience Award.
- Member Governing Body, Research and Advisory Council, Birbal Sahni Institute of Palaeosciences, Lucknow.
- Former Associate Editor, Journal of Earth System Sciences, Springer-Nature Publications.
- Member High Power Committee constituted by the honorable Supreme Court of India to assess the environmental degradation and impact of hydroelectric projects during the June 2013-Disaster in Uttarakhand.
- Former member, Program Advisory Committee, Earth and Atmospheric Sciences, SERB, DST, GoI.
- Former member Expert Committee on “Integrated program on dynamics of glaciers in the Himalaya”, DST, GoI.

Research and Development Experience:

- Dr. Navin Juyal did his Master from HNB Garhwal University in 1980 and Ph.D. in 2004 from MS University Baroda. He retired as Senior Scientist from the Physical Research Laboratory, a unit of Department of Space, Govt. of India, in Ahmedabad. He is currently working on the understanding of causes and consequences of extreme weather events in Himalaya.
- Dr. Juyal spent nearly 30 years in basic research which involved understanding the pattern of climate variability during the last 100 thousand years. The emphasis of his research was to understand the long-term (multi-millennial) and short-term (centennial) scale impact of climate change on the earth surface processes and landform evolution.
- Some of the major research projects undertaken by Dr. Juyal include, ‘The causes and consequences of climate change in Himalaya with emphasis on pattern of glacier advances and retreat covering the NW to central Himalaya’; ‘Climate-human interaction and extreme hydro meteorological events’; ‘Reconstructing the pattern of past climate variability using the relict glacial lake sediment and fluvial deposits’ etc.
- Dr. Juyal has also worked on ‘Understanding the pattern of dune dynamics and dryland river response to regional and global climate change’; and ‘Land-sea interaction (sea level changes) along the western coast of India with emphasis on the emergence and decline of Harappan civilization’.
- Dr. Juyal has more than 100 research papers in peer reviewed journals with around 3400 citations.

पं० गोविन्द बल्लभ पंत

स्मारक व्याख्यान: XXVIII

डा० नवीन जुयाल

सितंबर 10, 2022

कोसी – कटारमल, अल्मोड़ा



गोविन्द बल्लभ पन्त राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान

(भारत सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान)

कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड (263 643)

हिमालयी क्षेत्र में अपरिहार्य वायुमंडलीय तापमान वृद्धि, हिममंडल क्षरण और भू-परिदृश्य अस्थिरता

नवीन जुयाल

पूर्व वरिष्ठ वैज्ञानिक, भौतिकी अनुसंधान प्रयोगशाला (अंतरिक्ष विभाग की एक इकाई), अहमदाबाद
ई-मेल: navinjuyal@gmail.com

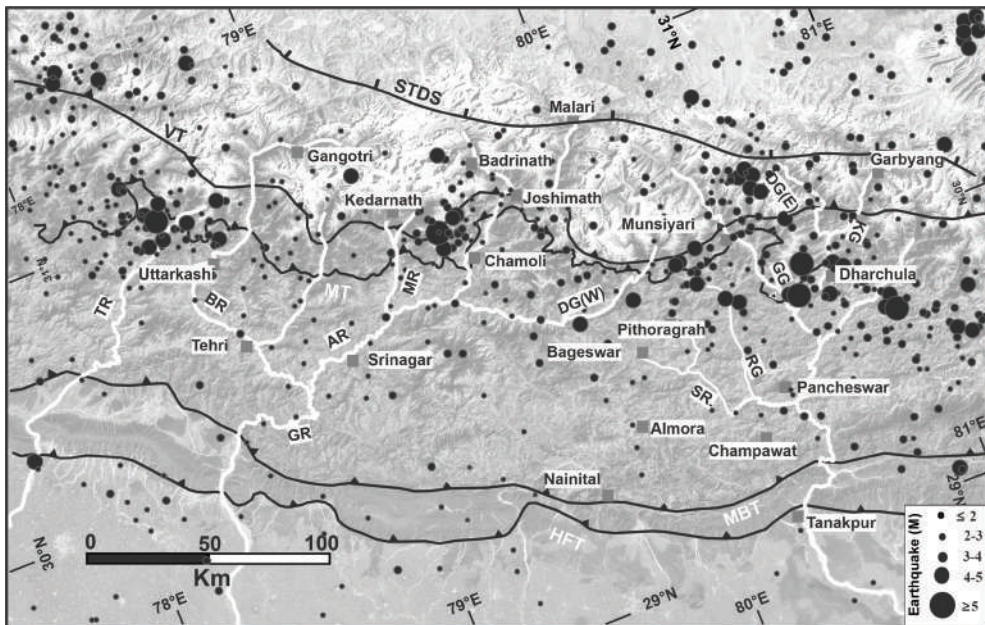
भूमण्डलीय तापक्रम वृद्धि से उत्प्रेरित होकर हिममंडल के पिघलने से उच्च एशियाई पर्वतों से आपूर्ति किए जाने वाले जल की मात्रा और समय में गंभीर रूप से बदलाव आ रहे हैं, जिससे जल अनुप्रवाह क्षेत्र की खाद्य और ऊर्जा प्रणालियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, जिन पर अरबों लोग आश्रित हैं (डोंगफेंग ली, इत्यादि 2022)।

पृष्ठभूमि: संवेदनशीलता, विविधता और दिव्यता हिमालयी क्षेत्र की पहचान है, यह क्षेत्र भारतीय और यूरेशियन प्लेट के टकराव से उभरा है। कम दूरी पर पर्वतों की ऊंचाई में तेजी से परिवर्तन (<1000 से >7000 मीटर तक) के कारण यहाँ जलवायु, पृथ्वी की सतह की प्रक्रियाओं, और मानव गतिविधियों (सांस्कृतिक विविधता) में जबरदस्त बदलाव आता है। उपोष्णकटिबंधीय आर्द्र (दक्षिणी मैदानों) की जलवायु उत्तरी भीतरी इलाकों में बर्फ से ढकी पर्वत श्रृंखलाओं की जलवायु अल्पाइन टुंड्रा की जलवायु से भिन्न होती है और पर्वत श्रृंखलाओं की ढलानों के साथ यह भिन्नता और भी आकस्मिक है। उदाहरण के लिए, दून घाटी में उपोष्णकटिबंधीय आर्द्र जलवायु है, जबकि मसूरी, जो सिर्फ 1.3 किमी दूरी पर स्थित है, वहाँ समशीतोष्ण जलवायु है। हिमालय क्षेत्र अच्छी वार्षिक वर्षा (औसत 1500 मिमी) से परिपूर्ण है जो बर्फ और ग्लेशियरों के साथ प्रमुख नदियों और असंख्य धाराओं को जल आपूर्ति कराता है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव हिमालय पर मंडराते देख भारत सरकार ने हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय हिमालयी

पारिस्थितिकी तंत्र मिशन (एन.एम.एस.एच.ई.) नामक एक महत्वाकांक्षी परियोजना की शुरुआत की। इसी तरह, उत्तराखंड सरकार ने भी 2014 में "जलवायु परिवर्तन पर उत्तराखंड कार्य योजना (यू.ए.पी.सी.सी.): संकट के अवसर में परिवर्तन" पर रिपोर्ट तैयार की। इस रिपोर्ट में आगाह किया गया है कि उत्तराखंड में वर्षा की घटनाओं में वृद्धि होने की संभावना है, जिससे हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र में बाढ़, भूस्खलन आदि से अत्यधिक नुकसान हो सकता है। इसके अलावा यह भी अनुमान लगाया गया है कि यह बाढ़ें मौजूदा परिमाण के 30% से भी अधिक तक बढ़ सकती है जिससे राज्य के मौजूदा बुनियादी ढांचे पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा। सबसे बुरा असर उच्च हिमालयी क्षेत्रों पर होगा, जहां तापमान परिवर्तन की गंभीरता बढ़ जाएगी और इसके परिणामस्वरूप गंभीर पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न हो सकता है, जो सतह के जल अपवाह कारक, तापमान, ढाल, सतही विकिरण आदि पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है।

मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे गो. ब. पंत राष्ट्रीय हिमालयी पर्यावरण संस्थान के वैज्ञानिकों की योग्य

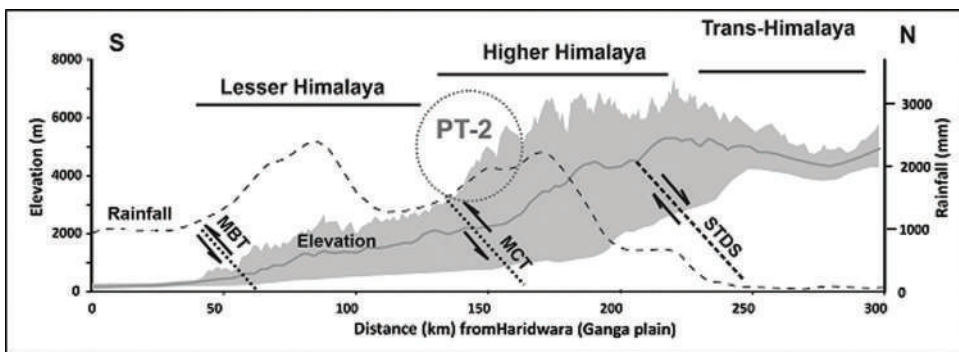


चित्र -1: उत्तराखंड राज्य का डिजिटल एलिवेशन मैप (डीईएम) भूकंप के वितरण के साथ-साथ प्रमुख टेक्टोनिक सीमाओं को दर्शाता हुआ। एमटी- मुनस्यारी थ्रस्ट, वीटी-वैक्रता थ्रस्ट, एमबीटी- मेन बाउंड्री थ्रस्ट, एचएफटी-हिमालय फ्रंटल थ्रस्ट, टीआर-टोंस नदी, बीआर-भागीरथी नदी, एआर-अलकनंदा नदी, जीआर-गंगा नदी, एमआर-मंदाकिनी नदी, डीजी (ई)- धौली गंगा (पूर्व), केजी- काली गंगा, आरजी-राम गंगा, एसआर- सरयू नदी, डीजी (डब्ल्यू)- धौली गंगा (पश्चिम)।

टीम और अन्य विषय विशेषज्ञों, जो हिमालयी क्षेत्र के लिए प्रतिबद्धता से कार्यरत हैं उनके सामने अपनी बात रखने का अवसर मिल रहा है। संस्थान के स्थापना दिवस पर मुझे व्याख्यान प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करने के लिए मैं संस्थान के निदेशक के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। पिछले कुछ दशकों से यह संस्थान हिमालयी क्षेत्र के सतत विकास और इसके प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और विकास के तरीकों पर खोज एवं अनुसंधान की दिशा में अथक प्रयास कर रहा है। इस वार्ता में मैं कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित कर रहा हूँ, जिनके लिए मुझे लगता है कि वोस प्रयासों की आवश्यकता है। विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के त्वरित प्रभावों से उत्पन्न होने वाले खतरों को ध्यान में रखते हुए। चूंकि मेरा अधिकांश शोधकार्य उत्तराखंड

हिमालय के लिए समर्पित है, अतः मेरे व्याख्यान में मुख्यतया आप इस क्षेत्र के उदाहरणों का हवाला ही पायेंगे।

उभरता हिमालय: हिमालय, महाद्वीप-महाद्वीप की टक्कर (अभिसारी विवर्तनिकी) का परिणाम है इसीलिए यहाँ चट्टानें खंडित, विखंडित और आंशिक रूप से अव्यवस्थित हैं। निरंतर कंप्रेसिव मूवमेंट के कारण भू-भाग सीमा थ्रस्ट का निर्माण हुआ है। ये उत्तर से दक्षिण तक दक्षिण तिब्बती डिटेचमेंट सिस्टम (एस.टी.डी.एस.), मेन सेंट्रल थ्रस्ट (एम.सी.टी.), मेन बाउंड्री थ्रस्ट (एम.बी.टी.) और मेन फ्रंटल थ्रस्ट (एम.एफ.टी.) में विभाजित हैं (चित्र 1 और 2)। यह स्थलाकृतियाँ उत्पन्न करने के अलावा लिथोलॉजिकल असंतुलन का भी सीमांकन करता है। इस प्रकार, उभरती हिमालयी



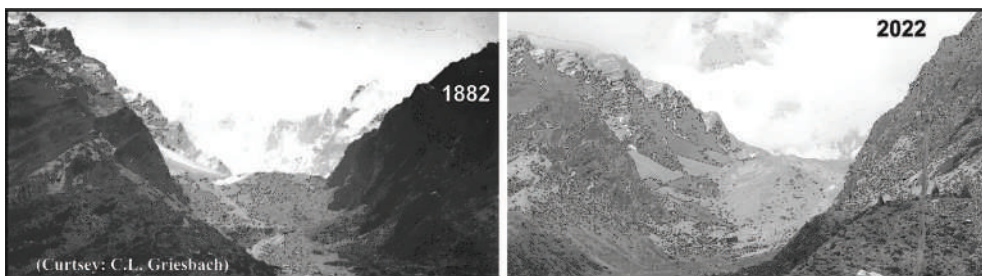
चित्र 2: हरिद्वार पास्टमलारी स्थलाकृतिक प्रोफाइल, वर्षा प्रोफाइल ओवरलैन (डैश) के साथ। सलेटी स्वाथ न्यूनतम और अधिकतम स्थलाकृतिक ऊंचाई दर्शाता है तथा औसत ऊंचाई (ठोस रेखा) द्वारा दर्शाया गया है। पी.टी.-2 भौगोलिक संक्रमण-2। इसके अलावा कम, उच्च और ट्रांस-हिमालय का सीमांकन करने वाले प्रमुख थ्रस्टों की अनुमानित स्थितियों को भी दर्शाया गया है कि एम.बी.टी.- मेन बाउंड्री थ्रस्ट, एम.सी.टी.- मेन सेंट्रल थ्रस्ट, एस.टी.डी.एस.-साउथ तिब्बती डिस्ट्रक्टिव सिस्टम हैं (सौजन्य: डॉ नरेश राणा)।

स्थलाकृतियों ने वर्षा विविधताओं के तरीको को निर्धारित करने के अलावा (चित्र 2), जलवायु में अपार स्थानीय और क्षेत्रीय विविधता उत्पन्न की हैं, तथा इसके प्रतिकूल, पारिस्थितिक क्षेत्रों में स्थानिक और लौकिक परिवर्तनशीलता को भी निर्धारित किया है।

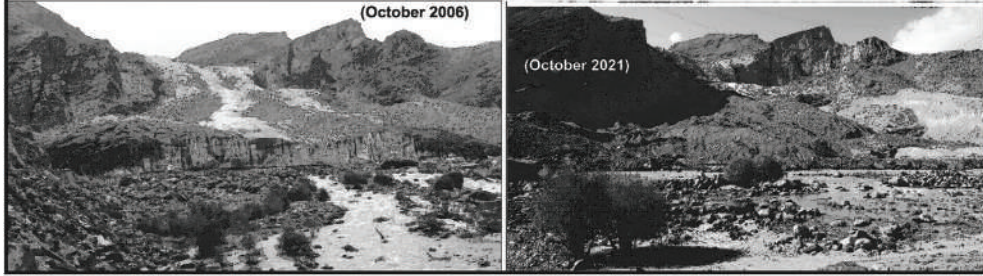
हिमालयी क्रायोस्फीयर/हिममण्डल: अगले कुछ दशकों में भारत सहित एशिया का वह भाग, जिसमें लुप्त हो रहे हिमनद पानी की आपूर्ति को नकारात्मक रूप से प्रभावित करेंगे, शायद सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र होगा। छह देशों (भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, चीन, भूटान और नेपाल) में 2400 किलोमीटर तक फैला हुआ क्षेत्र, जिसमें उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के अलावा किसी भी अन्य क्षेत्र की तुलना में सर्वाधिक ताजा पानी है, लोकप्रिय रूप से हिंदू कुश हिमालय क्षेत्र (एच.के.एच.) के रूप में

जाना जाता है। बर्फ और हिमनदों का पिघलना, सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र घाटियों में रहने वाले 750 करोड़ से अधिक लोगों, जिसमें जल उद्गम के क्षेत्रों में रहने वाले लगभग 200 करोड़ लोग शामिल हैं, के लिए पानी की उपलब्धता के समय और परिमाण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है (हिमालय के ग्लेशियर पर रिपोर्ट, 2021)। हिमपात और हिमनदों का पिघलना घाटियों के भीतर कई स्थानों पर, विशेषकर जल उद्गम के क्षेत्रों में, सतही जल के समय और उपलब्धता को मुख्य रूप से नियंत्रित करता है।

अध्ययनों से संकेत मिलता है कि हिमालय में हिमनदों की नवीनतम प्रगति (रीसेंट ग्लेशियल एडवांसमेंट) विश्व स्तर पर दर्ज की गयी लिटिल आइस ऐज (एल.आई.ए.) के दौरान हुई, जो 16 वीं शताब्दी के आसपास शुरू हुई और 1850 ईसवी



Nilang glacier Zad Ganga valley, Uttarakhand Himalaya



Parkachik glacier Suru valley Zaskar Himalaya
(Curtsey: Dr Shubhra Sharma)

चित्र-3: एल.आई.ए. की समाप्ति के तीस साल बाद और वर्तमान में ऊपरी पैनल; निलांग हिमनद (भागीरथी घाटी) में पिछले 140 वर्षों में कोई महत्वपूर्ण घटौती नहीं देखी गई। सुरु घाटी (पश्चिमी जांस्कर पर्वतमाला) में पाराचिक हिमनद की घटौती की प्रवृत्ति को दर्शाने वाले निचले पैनल में पिछले 15 वर्षों में महत्वपूर्ण घटौती देखी जा सकती है।

के आसपास समाप्त हुई (ओरलेमैन्स, 2005)। एल.आई.ए. की समाप्ति के बाद से हिमनदों में लगभग विश्वव्यापी घटौती देखी गई है, यह प्रवृत्ति हिमालय के अधिकांश हिमनदों पर भी लागू होती है। घटते हिमनदों ने भारी तलछट को पीछे छोड़ दिया है जिसे वर्तमान में हिमनद मुख के नीचे कई हिमालयी घाटियों में अनुक्रमित देखा जा सकता है।

एल. आई. ए. का उपयोग प्राकृतिक जलवायु परिवर्तनशीलता मापन के लिये एक बेंचमार्क के रूप में किया जाता है, जिसके सापेक्ष मानवजनित जलवायु परिवर्तन का मूल्यांकन किया जा सकता है। यह आशंका है कि यदि तापमान वृद्धि की वर्तमान प्रवृत्ति जारी रहती है, तो बर्फ पिघलने पर निर्भर नदियाँ इस हद तक जलीय व्यवधानों का सामना कर सकती हैं कि शुष्क मौसम के दौरान सबसे अधिक आबादी वाले गंगा के मैदानी क्षेत्रों में 'पानी खत्म होने' की स्थिति पैदा हो सकती है।

हिमनद स्वास्थ्य का पर्यवेक्षण: हिमालय में जलवायु परिवर्तन के प्रति हिमनदों की प्रतिक्रिया के पैटर्न का निरीक्षण करना आवश्यक है। वर्तमान विधियाँ हिमनद की गतिशीलता का एक खाका प्रदान करती हैं जो बताती है कि हिमनद वास्तव

में घटाव की अवस्था पर हैं। उदाहरण के लिए, व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली सबसे सरल विधि हिमनद टर्मिनस (मुंह/थूथन) के वार्षिक स्थिति को अभिलेखित (रिकॉर्ड) करना है। इस तरह का अवलोकन/अभिलेखन अल्पकालिक जलवायु परिवर्तनशीलता और कभी-कभी स्थान विशेष के लिए एक क्षणिक प्रतिक्रिया हो सकती है। हिमनद के पीछे खिसकने की दर कई कारकों पर निर्भर करती है जिसमें समुद्र तल से ऊंचाई, स्थलाकृतिक ढलान और पहलू, मलबे का आवरण और बर्फ की मोटाई, आदि, शामिल हैं। अधिकतर मामलों में, हिमनदों के पीछे हटने की दरों का अध्ययन करते समय उपरोक्त कारकों (सीमा की स्थिति) पर गंभीर रूप से विचार नहीं किया जाता है। जो कि एक ही हिमनद से प्राप्त हुई पीछे हटने की परिवर्तनशील दरों के कारणों में से एक प्रतीत होता है। फिर भी, यदि हम मौजूदा आंकड़ों को संक्षेप में देखें तो यह इंगित करते हैं कि हिमनद के पीछे हटने की उच्च दर हल्की ढलानों पर सबसे कम ऊंचाई के क्षेत्रों पर स्थित हिमनदों, जिनके टर्मिनस के पास पतली बर्फ हो तथा मलबे का परिवर्तनशील आवरण हो, इनसे जुड़ी हुई प्रतीत होती है। इसके अलावा, यह पाया गया है कि पृथ्वी के गर्म होने की स्थिति में दक्षिण की ओर सबसे कम ऊंचाई पर स्थित छोटे हिमनदों

(<5 किमी), और लटकते हिमनदों 'एक पर्याप्त संचय क्षेत्र से कटे हुए' के पहले विलुप्त होने की संभावनायें हैं (आर्मस्ट्रांग, 2010)।

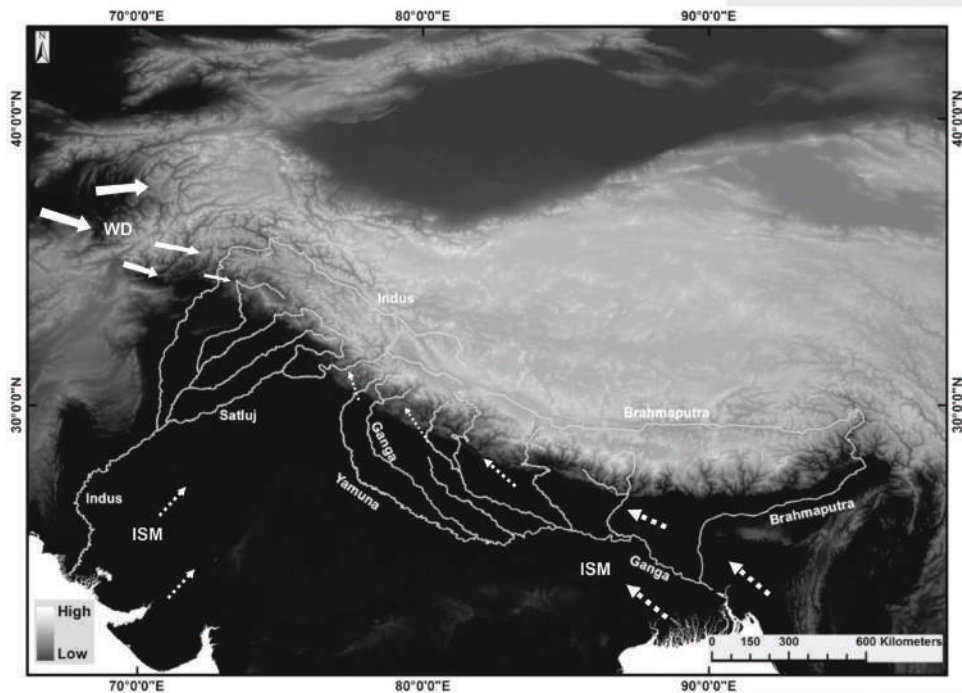
हिमनदों के पीछे हटने/आगे बढ़ने की दर के अधिकांश अनुमान व्यापक और वैज्ञानिक रूप से सशक्त हिमनद द्रव्यमान संतुलन माप के बजाय हिमनद की लंबाई परिवर्तन के मापन पर आधारित हैं, एक हिमनद को दो क्षेत्रों, संचय का ऊपरी क्षेत्र जहां हिमनद शुद्ध वार्षिक द्रव्यमान लाभ का अनुभव करता है और पृथक्करण क्षेत्र जहां हिमनद शुद्ध द्रव्यमान हानि का अनुभव करता है, में विभाजित किया जा सकता है। जिस समोच्च ऊंचाई पर ये दोनों क्षेत्र मिलते हैं उसे संतुलन रेखा ऊंचाई (ई.एल.ए) कहा जाता है यहां हिमनद का वार्षिक शुद्ध द्रव्यमान संतुलन शून्य होता है तथा यह क्षेत्र जलवायु (तापमान और वर्षा) के प्रति संवेदनशील होता है। चूंकि हिमनद की लंबाई जलवायु परिवर्तन के लिए विलंबित प्रतिक्रिया है और ऊपर वर्णित कई कारकों से प्रभावित होती है, इसलिए हिमनद द्रव्यमान संतुलन को जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए एक अधिक प्रत्यक्ष और तत्काल हिमनद प्रतिक्रिया माना जा सकता है (भट्टाचार्य इत्यादि, 2016)। उपग्रह आधारित रिमोट सेंसिंग डेटा पर हॉलिया अध्ययन गंगोत्री हिमनद के पीछे हटने की दर (1995–2006 के दौरान 19.7 ± 0.6 मीटर प्रति वर्ष से 2006–2015 के दौरान 9.0 ± 3.15 मीटर प्रति वर्ष) में गिरावट का संकेत देता है। ऐसा इसलिए हो सकता है क्योंकि पहले के अध्ययन बड़े पैमाने पर 1962 के भारतीय सर्वेक्षण स्थलाकृतिक मानचित्र पर चिह्नित हिमनद मुख की संदर्भ स्थिति पर आधारित थे, जो भ्रामक हो सकता है (भट्टाचार्य इत्यादि, 2016)। इसके अलावा, दो समीपवर्ती घाटियों से हिमनदों में बर्फ के घटने के संदर्भ में विपरीत परिणाम प्राप्त हुए हैं। उदाहरण के लिए, भागीरथी बेसिन की तुलना में सरस्वती घाटी (अलकनंदा बेसिन) में

हिमनद बर्फ के घटने की दर दो गुना अधिक है। इसे ध्यान में रखते हुए हिमनद जो एक सामान्य जलग्रहण विभाजन (आसपास की घाटियों) पर स्थित हैं, क्या यह भूविज्ञान, भू-आकृति विज्ञान, अभिविन्यास और जलवायु की जटिल सहभागिता के कारण हो सकता है? कहने की जरूरत नहीं है कि *हिमालय में हिमनद –जलवायु सहभागिता का विज्ञान अभी भी शैशवास्था में है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक हिमनद एक सामान्य जलवायु प्रभाव के लिए अलग तरह से प्रतिक्रिया करता है और हिमनद के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों की खोज के लिए इंगित करता है।*

प्रचलित जलवायु और तापक्रम वृद्धि की प्रवृत्तियाँ:

हिमालय पर्वतमाला पर दो मौसम प्रणालियों का प्रभुत्व है। भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (आई.एस. एम.) और मध्य-अक्षांश पछुआ हवाएं। स्थानिक रूप से इन दो प्रणालियों का योगदान हिमालय के साथ-साथ और उसके पार भिन्न-भिन्न होता है (चित्र 4)। उदाहरण के लिए, पूर्वी और मध्य हिमालय पर आई.एस.एम. का प्रभुत्व है, जबकि उत्तर-पश्चिम हिमालय में मध्य-अक्षांश पश्चिमी हवाओं के भीतर समाहित पश्चिमी विक्षोभों से वर्षा होती है (चित्र 4)। इसके अलावा, दक्षिण-उत्तर वृद्धि भी वर्षा परिवर्तनशीलता को निर्देशित करती है, विशेष रूप से आई.एस.एम. जो जैव विविधता के विषम वितरण से उत्पन्न होती है। उदाहरण के तौर पर उत्तराखंड हिमालय में, वानस्पतिक संरचना 1000 मीटर से नीचे के समशीतोष्ण-पण्णिपाती जंगल से लेकर 3500 मीटर से ऊपर के अल्पाइन चरागाहों तक भिन्न होती है। घाटियों का औसत तापमान गर्मियों में 15–25 डिग्री सेल्सियस के बीच होता है और सर्दियों में बहुत ठंडा हो जाता है।

समुन्द्र तल से 4500 मीटर से अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में भीषण सर्दियों का अनुभव होता है, जहां



चित्र-4. हिमालय का डिजिटल एलिवेशन मैप (डी.ई.एम.) दो मौसम प्रणालियों, मध्य अक्षांश पश्चिमी हवाएं (ठोस तीर) और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून (बिंदीदार तीर) के प्रभाव को दर्शाता हुआ।

तापमान हिमांक बिंदु से काफी नीचे होता है और बर्फ के रूप में वर्षा होती है। अध्ययनों से हिमालय में बीसवीं शताब्दी में महत्वपूर्ण तापमान परिवर्तन देखने को मिल रहा है। बीसवीं सदी की पहली छमाही के दौरान वायुमंडलीय तापमान वृद्धि की प्रवृत्ति लगभग 0.10 डिग्री सेल्सियस (0.16 डिग्री सेल्सियस) प्रति दशक थी, जो बाद में इक्कीसवीं शताब्दी की शुरुआत से दोगुनी होकर 0.32 डिग्री सेल्सियस प्रति दशक हो गई (यान और लियू, 2014)। हिमालयी क्षेत्र के अधिकांश हिस्सों में अन्य मौसमों की तुलना में सर्दियों में तापमान वृद्धि दर अधिक होने की सूचना है। चिंता का विषय यह है कि सर्दियों के तापमान में लगातार वृद्धि हिमनद के द्रव्यमान संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है। ट्री-रिंग कालक्रम भी मौसम

संबंधी टिप्पणियों का समर्थन करते हैं।

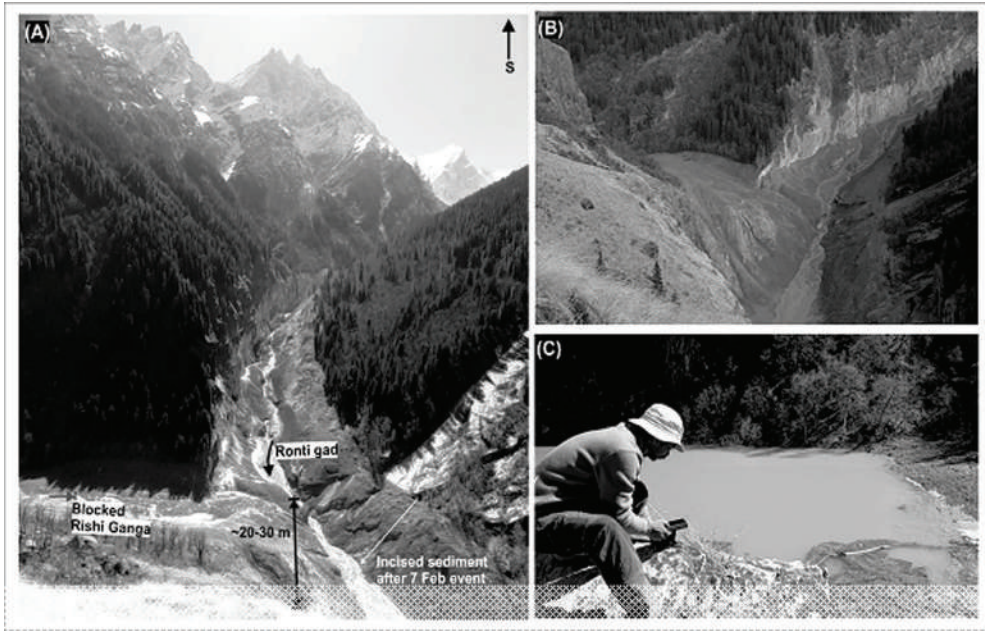
जलवायु-हिमनद सम्बन्ध: ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि के कारण पिछली शताब्दी के दौरान औसत वैश्विक तापमान में वृद्धि हुई है। हालांकि, यदि हिमालय के हिमनदों की हालिया पीछे हटने की दर के लिए तापमान वृद्धि प्रमुख योगदानकर्ता थी, तो पीछे हटने की दर को न्यूनतम परिवर्तनशीलता दर्शानी चाहिए थी। वास्तव में, ऐसे निष्कर्ष उपलब्ध हैं जिनके अनुसार वैश्विक तापमान वृद्धि के दौरान मानसून के प्रभुत्व वाले मध्य हिमालय (उत्तराखंड) में मानसूनी वर्षा में वृद्धि के कारण हिमनदों का विस्तार होना चाहिए। हमें लगता है कि यह एक अति-सरलीकृत व्याख्या है, इस तथ्य को देखते हुए कि मानसून पूरी तरह से भूमि-समुद्र थर्मल

कंट्रास्ट द्वारा संचालित नहीं है, और अन्य समान रूप से महत्वपूर्ण स्थितियाँ हैं। कोई यह भी तर्क दे सकता है कि हाल ही में पीछे हटने की प्रवृत्ति हिमालय के हिमनदों द्वारा प्रकट एक अस्थायी क्षणिक जलवायु अभिव्यक्ति भी हो सकती है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि संरक्षण और विवेकपूर्ण प्रबंधन हेतु किसी भी नीतिगत उपाय को विकसित करने के लिए, वर्तमान हिमनदों के पीछे हटने के अनुमान सीमित समय श्रृंखला डेटा पर आधारित हैं लेकिन एक छोटे से क्षेत्र के प्रति पक्षपातपूर्ण हैं जैसे—पश्चिमी और मध्य हिमालय के कुछ हिमनद। जब तक हमारे पास पूर्वी, मध्य, पश्चिमी और उत्तर-पश्चिमी हिमालय का प्रतिनिधित्व करने वाले लंबे समय तक श्रृंखलाबद्ध आंकड़े नहीं होंगे, तब तक जलवायु (तापमान और वर्षा) के प्रभाव के बारे में हमारा अनुमान काल्पनिक ही रहेगा। इसे देखते हुए, हिमालय का मध्य खंड जिसमें उत्तराखंड शामिल है, महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि इस क्षेत्र के हिमनद आई.एस.एम. और पश्चिमी विक्षोभ दोनों को दर्शाते हैं (चित्र-4)। इसके अलावा, अब तक किए गए अध्ययन सीमित हिमनदों को नियोजित करने वाले हिमनदों पर केंद्रित हैं। दीर्घकालिक क्षेत्रीय जलवायु सूचकांक विकसित करने के लिए कुछ प्रयास किए गए हैं—द्रव्यमान संतुलन के लिए एक प्रॉक्सी, जो सर्दियों के संचय (ठंड के मौसम में वर्षा) और गर्मियों के पृथक्करण (गर्म मौसम में औसत तापमान) के लिए सापेक्ष परिमाण का अनुमान लगाता है। इस तरह के वस्तुनिष्ठ सूचकांकों को अपनाने से हम हिमालय में हिमनद परिवर्तनशीलता का अधिक मात्रात्मक मूल्यांकन कर सकेंगे और हिमनद, जलवायु, जल विज्ञान और जैविक प्रणालियों के बीच संबंध स्थापित कर सकेंगे। यह उन महत्वपूर्ण मुद्दों के निवारण में महत्वपूर्ण हो सकता है, जिन पर हमारी अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता बहुत अधिक निर्भर करती है।

हिममण्डल प्रतिक्रिया: जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से उच्च-पर्वतीय हिमनदों की पीछे हटने के परिणामस्वरूप अक्सर मोराइन बांध हिमनद झीलों का विकास होता है। मोराइन बांध की विफलता अक्सर बड़ी मात्रा में पानी और तलछट की रिहाई के साथ होती है, जिसे ग्लेशियल लेक आउटबर्स्ट फ्लड (जी.एल.ओ.एफ.) कहा जाता है। इसलिए, जी.एल.ओ.एफ. के जोखिम को कम करने के लिए, हिमनद झीलों का उनकी हाइड्रोलॉजिकल विशेषताओं के आधार पर अध्ययन करने की आवश्यकता है, साथ ही उन झीलों से संग्रहीत पानी को छोड़ने के प्रयासों के साथ, जिनमें जी.एल.ओ.एफ. उत्पन्न करने की क्षमता है, जैसा कि भूटान हिमालय में थोरथोर्मी हिमनद में प्रदर्शित किया गया है। जबकि वैश्विक जलवायु परिवर्तन एशिया के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यावरण को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है, हिमालयी हिममंडल पर इसका प्रभाव क्षेत्रीय जल संसाधनों के लिए एक बड़ा खतरा है। हालिया अध्ययन (जैसे, राणा इत्यादि, 2021; ली इत्यादि 2022) सुझाव देते हैं कि 7 फरवरी 2021 की ऋग्शि गंगा फ्लैश फ्लड की घटना हिमालयी क्षेत्र में वायुमंडलीय तापमान वृद्धि की भू-आकृतिक अभिव्यक्ति हो सकती है।

हिमालयी क्षेत्र में चरम मौसमीय घटनाओं की बढ़ती प्रवृत्ति दिख रही है और उत्तराखंड हिमालय कोई अपवाद नहीं है। यह (वसंत के मौसम) जंगल की आग की घटनाओं, हिमस्खलन, अचानक बाढ़ और भूस्खलन की आवृत्ति और परिमाण में वृद्धि से प्रकट होता है। सबिन और कृष्णन (2020) ने “हिमालय के ऊपर जलवायु परिवर्तन” पर अपने हालिया शोध में दर्शाया है कि मानव-प्रेरित जलवायु परिवर्तन ने 1951–2014 के दौरान प्रति दशक 0.2 डिग्री सेल्सियस की दर से हिमालय और तिब्बती पठार में त्वरित तापमान वृद्धि को जन्म दिया है। जहां उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों (ऊंचाई >4



चित्र-5, (ए) रौंती गाड जहां से 7 फरवरी 2021 की बाढ़ आई थी, जिससे ऋषि गंगा और घौली गंगा (पश्चिम) में बड़े पैमाने पर विनाश (मानव जीवन और बैराज) हुआ था। (बी) रौंती गाड द्वारा लाये गये मलबे के कारण ऋषि गंगा का अवरुद्ध होना। (सी) ऋषि गंगा पर अस्थायी झील का बनना (संशोधित राणा इत्यादि., 2021)।

किमी) में प्रति दशक लगभग 0.5 डिग्री सेल्सियस की दर से प्रवर्धित वार्मिंग हुई। उच्च ऊंचाई वाले काराकोरम हिमालय को छोड़कर हिमालयी क्षेत्र के कई क्षेत्रों में हाल के दशकों में सर्दियों के समय में होने वाली बर्फबारी और हिमनद के पीछे हटने की दर में उल्लेखनीय गिरावट आई है। इस क्षेत्र में भविष्य में तापमान वृद्धि, जो इक्कीसवीं सदी के अंत तक 2.6–4.6 डिग्री सेल्सियस की सीमा में होने का अनुमान है, जो कि बर्फबारी और हिमनदों के पीछे हटने की दर को और बढ़ा देगा, जिससे इस क्षेत्र के जल विज्ञान और कृषि पर गहरा प्रभाव पड़ेगा (साबिन एंव कृष्णन, 2020)। इसी प्रकार उच्च हिमालयी घाटियों (2500 मीटर से ऊपर) में जमी हुई हिमनदों की तलछट जलवायु गर्म होने पर विनाशकारी बाढ़ में परिवर्तित होने का खतरा पैदा कर सकती है (चित्र 5)।

ब्लैक कार्बन (बीसी): 1990 के दशक से बी.सी. की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई है, जो वायुमंडलीय वार्मिंग और अल्बेडो कमी जैसे तंत्रों के माध्यम से त्वरित हिमनद पीछे हटने के साथ मेल खाती है (रामनाथन और कारमाइकल, 2008)। हिमालयी हिमनदों के स्वच्छ जल के लाभों को बनाए रखने की सफल रणनीति के लिए बी.सी. उत्सर्जन में कमी होने की आवश्यकता है ताकि पवित्र उच्च-परावर्तक बर्फ और बर्फ की सतहों को पुनर्स्थापित किया जा सके, साथ ही ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को स्थिर और संभवतः कम किया जा सके। ब्लैक कार्बन के अलावा, इस बात की चिंता बढ़ रही है कि उच्च हिमालयी क्षेत्रों पर अवशोषित हो रहे एरोसोल भी वार्मिंग दर को बढ़ा सकते हैं जो परोक्ष रूप से स्नोपैक और हिमनदों के पिघलने की दर को बढ़ा सकते हैं (रामनाथन और कारमाइकल, 2008)।

चिरबासा (गंगोत्री हिमनदमुख के समीप) के एक हालिया अध्ययन ने परिवेशी वायु में बी.सी. एरोसोल की उपस्थिति का संकेत दिया है (नेगी इत्यादि, 2019)। अध्ययन से अनुमान लगाया गया है कि पवित्र हिमालयी स्थल में बी.सी. न केवल वायुमंडलीय स्थितियों (विकिरण बजट, जल विज्ञान चक्र, मानसून परिसंचरण) को प्रभावित करेगा और वायु की गुणवत्ता को क्षति पहुंचायेगा, अपितु प्राकृतिक संसाधनों (हिमनद, बर्फ, वनस्पतियों, जीव, आदि) पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। इसलिए, उच्च हिमालयी क्षेत्रों में बी.सी. एरोसोल के प्रभाव को कम करने के लिए, बी.सी. के लिए जिम्मेदार गतिविधियों हेतु ऊर्जा का एक स्थायी और पर्यावरण के अनुकूल विकल्प (सौर, भूतापीय आदि) प्रदान कर, जंगल की आग और अन्य बायोमास जलाने की गतिविधियों पर सक्रिय नियंत्रण के अलावा मानवजनित स्रोतों से इसकी उत्पत्ति को कम करने की आवश्यकता है (नेगी इत्यादि, 2019)।

भूस्खलन और आकस्मिक बाढ़: हिमालयी क्षेत्रों में भूस्खलन और आकस्मिक बाढ़ (फ्लैश फ्लड) युग्मित प्रक्रियाएं हैं। मौजूदा आंकड़ों से संकेत मिलता है कि भूस्खलन, जो मुख्यतया उच्च हिमालय के दक्षिणी किनारे पर घटित होते हैं एवं कभी-कभी विनाशकारी बाढ़ को जन्म दे सकती है, फिजियोग्राफिक ट्रांसिशन-2 (पीटी-2; चित्र 2) के रूप में भी जाना जाते हैं। पिछले 1000 वर्षों के दौरान दर्ज की गई अधिकांश बाढ़ लैंडस्लाइड लेक आउटबर्स्ट फ्लड (एल.एल.ओ.एफ.) द्वारा निर्देशित थी (वासन इत्यादि, 2013; शर्मा इत्यादि, 2017)। पीटी-2, स्थलाकृतिक भू-भाग में आकस्मिक वृद्धि होने के कारण यह केंद्रित और उच्च तीव्रता वाली वर्षा प्राप्त करता है (चित्र 2)। पीटी-2 के आसपास के क्षेत्र में 5 से 20 किमी चौड़ा शियर जोन मौजूद है। पर्वतीय ढलान प्राचीन और हाल के भूस्खलन मलबे दोनों के निरंतर एग्रन से ढके

हुए हैं। परिणामस्वरूप, ढलाने अस्थिर हो जाती हैं और समय के साथ-साथ निचले क्रम की धाराओं को अवरुद्ध कर देती है। इस तरह की धाराओं के टूटने से हिमालय की घाटियों में असामान्य उच्च परिमाण के फ्लैश फ्लड आ जाते हैं (वासन इत्यादि, 2013; सुंदरियाल इत्यादि, 2015)।

पैराग्लेशियल ज़ोन और फ्लैश फ्लड: कई अनुप्रस्थ घाटियों में सिकुड़े हुए हिमनदों द्वारा छोड़े गए पैराग्लेशियल मलबे की बड़ी मात्रा उच्च हिमालय में प्रमुख पर्यावरणीय चिंताओं में से एक है। ये घाटियाँ 2500 मीटर या उससे अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों पर पाई जा सकती हैं। जो पूर्व हिमनद विस्तार के समीप स्थित हैं जहाँ पर वर्तमान में गैर-हिमनद प्रक्रिया का प्रभुत्व है। पैराग्लेशियल ज़ोन, उच्च-पर्वतीय परिदृश्यों के भीतर और बाहर हिमनद तलछट के पुनः अवसादन और स्थानान्तरण के कारण पारिस्थितिक रूप से नाजुक और भूगर्भीय रूप से अस्थिर होती है (सुन्दरियाल इत्यादि, 2015 एवं अन्य स्रोत)। इस प्रकार यह सुझाव दिया जा सकता है कि पैराग्लेशियल ज़ोन एक गतिशील प्रणाली है, जो स्थानीय और क्षेत्रीय जलवायु परिवर्तनशीलता के कारण लगातार बदलती हिमनद सीमा की स्थिति को समायोजित करती है। इसलिए, एक छोटा उत्प्रेरक (अल्पकालिक चरम मौसम की घटना) असंगठित पैराग्लेशियल तलछट की बड़ी मात्रा को फिर से जुटाने के लिए पर्याप्त है (चित्र 6)। उत्तराखंड हिमालय में पैराग्लेशियल ज़ोन से शुरू हुई विनाशकारी बाढ़ के कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं।

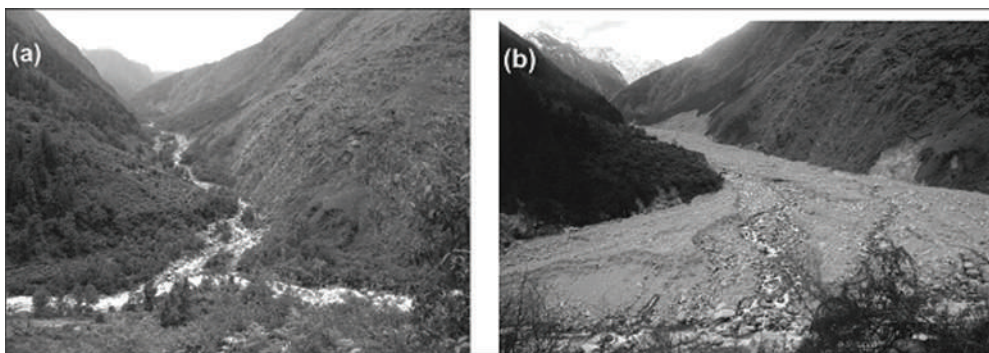
(i) **बिरही गंगा बाढ़:** 6 सितंबर 1893 को अलकनंदा नदी की एक सहायक नदी जिसे बिरही गंगा कहा जाता है, को 900 मीटर ऊंची घाटी से लुढ़कते हुए 5000 मिलियन टन चट्टानी मलबे द्वारा अवरुद्ध कर दिया गया था। मलबे ने

नदी को अवरुद्ध कर एक झील का निर्माण कर दिया जो लगभग 270 मीटर ऊंची, आधार पर 3 किमी चौड़ी और शिखर पर 600 मीटर चौड़ी थी (हॉलैंड, 1894)। तत्कालीन अधीक्षण अभियंता, लेफ्टिनेंट कर्नल पुलफोर्ड के अथक प्रयासों ने कुशलतापूर्वक अनुप्रवाह क्षेत्र में बाढ़ की भयावहता का अनुमान लगाया। बिरही गंगा से हरिद्वार के बीच वास्तविक समय की निगरानी और बाढ़ की समय पर चेतावनी के लिए एक उत्कृष्ट टेलीग्राफ सिस्टम स्थापित किया गया था, जिसने भविष्यवाणी की थी कि अगस्त 1894 के दौरान भूस्खलन से बांध आंशिक रूप से टूट जाएगा। जैसा कि अनुमान था, 25 अगस्त 1894 को, बांध के ऊपर से पानी प्रवाहित होने लगा और आधी रात को बांध आंशिक रूप से ढह गया, जिससे बाढ़ की लहरें नीचे के क्षेत्रों की ओर आ गईं, बाढ़ की स्थिति 26 अगस्त की सुबह तक रही, जिससे श्रीनगर शहर के आसपास के क्षेत्र को अभूतपूर्व नुकसान हुआ; हालांकि, किसी के हताहत होने की सूचना नहीं थी (हॉलैंड, 1894)।

(ii) **अलकनंदा बाढ़:** जुलाई 1970 के दौरान, (76 वर्षों के बाद) अलकनंदा घाटी में दूसरी बड़ी बाढ़ देखी गई। अलकनंदा घाटी में कुंवारी दर्रे (पीटी -2) पर बादल फटने से वाटरशेड से एम.सी.

टी.के पास तक बाढ़ आ गई थी। एक अनुमान के अनुसार, बाढ़ द्वारा एक दिन में लगभग 15.9x106 टन तलछट को बहाकर लाया गया। तबाही इतनी भयंकर थी कि इसने गोहना झील को तलछट से भर दिया और बद्रीनाथ राजमार्ग के 10 किमी के हिस्से को नष्ट कर दिया, साथ ही 30 बसों के काफिले और तेरह पुल बाढ़ के पानी की धारा में बह गए। इसके अलावा, बहाव के निचले क्षेत्र हरिद्वार में (घोना झील से 300 किमी दूर स्थित), गंगा नहर का 10 किमी का हिस्सा उच्च हिमालय से लायी गयी तलछट, और बड़े पैमाने पर उखड़े हुए पेड़ों से भरा हुआ पाया गया (राणा इत्यादि, 2013)।

(iii) **कनोदिया गाड़ बाढ़ (भागीरथी घाटी):** 6 अगस्त 1978 की मध्यरात्रि को, एमसीटी क्षेत्र में बड़े पैमाने पर भूस्खलन ने भागीरथी नदी को बाधित कर दिया। भूस्खलन कनोदिया गाड़ (नदी) के पैराग्लेशियल क्षेत्र (गैरीधर के लगभग 4000 मीटर आसपास) में शुरू हुआ और भागीरथी नदी के संगम तक 4 किमी तक फैला, जहां इसने लगभग 14 घंटे तक नदी को अवरुद्ध कर दिया। चट्टानों और मलबे की लगभग 175 मीटर चौड़ी प्राचीर ने 35 मीटर गहरी, 45 मीटर चौड़ी और 3 किमी लंबी एक झील का निर्माण कर दिया।



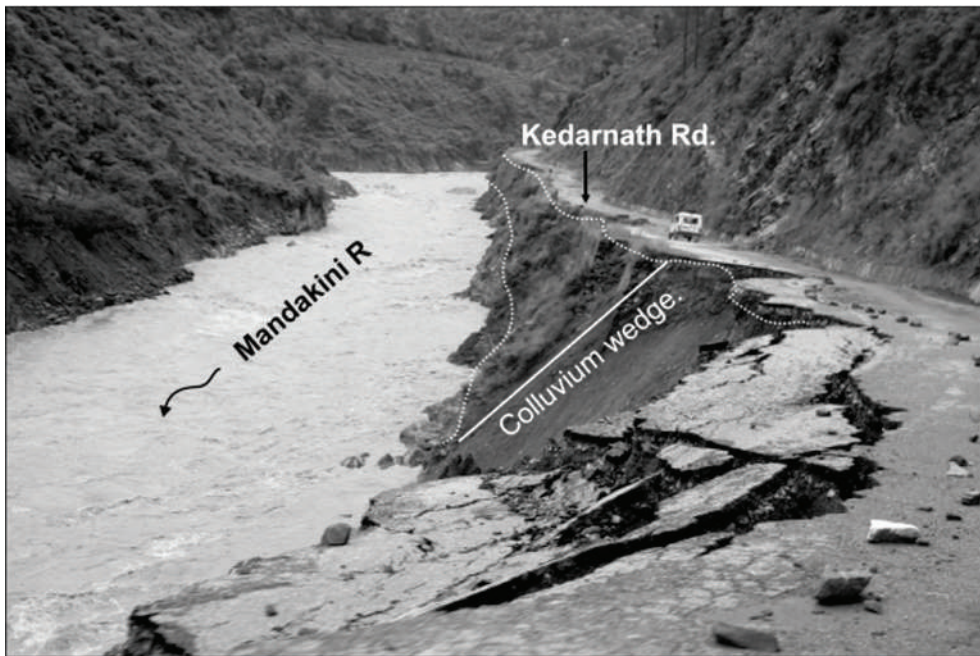
चित्र-6. खिरो गंगा एक नदी है जो पैराग्लेशियल ज़ोन (पी.टी.-2 के उत्तर) से होकर गुजरती है। (ए) जून 2013 बाढ़ से पहले और (बी) बाढ़ के बाद। रातोंरात बाढ़ में एकत्रित तलछट की मात्रा पर ध्यान दें (स्रोत: सुंदरियाल इत्यादि, 2015)।

10 अगस्त को भूस्खलित बांध के ऊपर से पानी निकलना शुरू हुआ और 11 अगस्त 1978 को यह टूट गया जिससे निचले क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर विनाश हुआ (अग्रवाल और चक, 1991)।

(iv) **मंदाकिनी बाढ़:** जून 2013 के दौरान, उत्तराखंड हिमालय की अधिकांश नदियाँ अप्रत्याशित तलछट प्रवाह से अवरुद्ध हो गईं, जिनमें से मंदाकिनी घाटी में सबसे अधिक जीवन हानियाँ हुईं। पीटी-2 पर पश्चिमी विक्षोभ और आईएसएम की परस्पर क्रिया के कारण उत्पन्न हुई। चरम मौसमीय घटना से बाढ़ शुरू हो गई थी, जिसके कारण पैराग्लेशियल तलछट (मोराइन, जलोढ़ पंखे, और भूस्खलन मलवा) का जमाव हुआ। हालांकि बाढ़ मौसम संबंधी घटनाओं से उत्पन्न हुई थी, लेकिन नदी के किनारे पर आंशिक

रूप से निर्मित बैराजों की बस्तियों और श्रृंखला के प्रसार के कारण बाढ़ का प्रकोप बढ़ गया था बढ़ती आबादी के साथ, उत्तराखंड हिमालय में बुनियादी ढांचे की मांग में भारी उछाल आया है। सुरक्षित आवास स्थान की कमी के कारण, कई बार हम उन क्षेत्रों पर कब्जा करने के लिए मजबूर होते हैं जो नदी के तल के समीप होते हैं। ऊपरी गंगा जलग्रहण क्षेत्र से 1000 साल के बाढ़ के इतिहास पर आधारित प्रक्षेपण ने संकेत दिया कि एल.एल.ओ.एफ. द्वारा उत्पन्न बड़ी बाढ़, और भारी वर्षा (जून 2013 केदारनाथ आपदा के समान) जारी रहेगी, और इनकी आवृत्ति में वृद्धि हो सकती है (वासन इत्यादि, 2013)। अगर ऐसा होता है, तो हमारे बुनियादी ढांचे बेहद कमजोर हो जाएंगे।

आवर्ती भूकंपीयता: पिछले 100 वर्षों के दौरान,



चित्र- 7. हिमालय में बाढ़ के स्तर के समीप की सड़कें चरम मौसमीयघटना के दौरान क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। यह केदारनाथ सड़क का एक उदाहरण है जो ढीली कोलुवियम पर बनाई गई थी। जून 2013 के दौरान, केदारनाथ मार्ग के ऐसे कई हिस्सेबाढ़ के पानी में बह गये।

हिमाचल प्रदेश में >7.5 तीव्रता के भूकंपों ने असम (1950), बिहार (1934) और कांगड़ा घाटी (1905) को हिलाकर रख दिया। हालांकि, उत्तराखंड हिमालय ने अभी भी इस प्रकार के उच्च तीव्रता वाले भूकंपों (>7.5) का सामना नहीं किया है, इसलिए इसे सेंट्रल हिमालयन सीस्मिक गैप कहा जाता है। कई शोधकर्ताओं ने आगाह किया है कि भारत-यूरेशियन अभिसरण (20 मिमी/वर्ष) के बावजूद, विगत 200–500 वर्षों से इस क्षेत्र में बड़ी भूकंपीय घटनाओं की अनुपस्थिति, इस क्षेत्र को किसी बड़े भूकंप की ओर इंगित कर रही है (बिल्हम इत्यादि, 1997)। हालांकि बड़े भूकंपों के जोखिम के लिए इस क्षेत्र की पहचान काफी समय से की जा चुकी है, लेकिन, सक्रिय विवर्तनिक संरचनाएं जो संभावित रूप से एक बड़ी भूकंपीय घटना की मेजबानी कर सकती हैं, उनका विस्तार से अध्ययन नहीं किया गया है। हालांकि भूकंपीय घटनायें के दक्षिण की ओर बढ़ने के सुझाव हैं तथा अध्ययनों ने भूकंपीय गतिविधियों के भीतरी इलाकों (हिंटरलैंड) में बढ़ने को प्रमाणित किया है।

वर्षा और बर्फ आधारित जलस्रोत: प्राकृतिक जलस्रोतों को सदियों से हिमालयी क्षेत्र में रहने वाले लोगों की जीवन रेखा माना जाता है। ये पहाड़ की अधिकांश आबादी के लिए लगभग 60% मीठे पानी के स्रोत हैं और इनके माध्यम से लगभग 64% क्षेत्र की सिंचाई की जाती है। एक अनुमान के अनुसार, हिमालय के भारतीय भाग में लगभग 5 मिलियन जल स्रोत हैं। इस प्रकार, पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र और सामाजिक-आर्थिक विकास में जल के स्रोतों की महत्वपूर्ण भूमिका है। ये जलस्रोत वर्तमान में जलग्रहण क्षेत्रों (स्प्रिंगशेड) में हो रहे विविध हस्तक्षेपों के कारण खतरे में हैं, विशेष रूप से ढलानों (प्राकृतिक और मानवजनित) के विघटन से भूमिगत जल में व्यवधान उत्पन्न होना, वनों की कटाई और पुनर्भरण (रिचार्ज) क्षेत्रों के खराब रखरखाव के कारण सतही अपवाह में

वृद्धि, आदि के कारण शामिल है।

प्राचीन काल से ही गांवों में पीने के पानी की आपूर्ति प्राकृतिक स्रोतों द्वारा होती आ रही है जो ऊपरी इलाकों से रिचार्ज होते हैं जो आमतौर पर अच्छे जंगलों से ढके होते हैं। यह तथ्य स्थानीय लोगों को अच्छी तरह से पता था इसलिए उन्होंने खालों के माध्यम से इन क्षेत्रों को बचाया (चित्र 8)। ये प्राकृतिक वर्षा जल संचयन के निकाय थे, जिन्हें अनुचित छेड़-छाड़ से सावधानीपूर्वक संरक्षित किया गया था। उत्तराखंड में नौला की परंपरा 6–7वीं शताब्दी से चली आ रही है और कुछ हिस्सों में अभी भी काम कर रही है। इन्हें पवित्र माना जाता था, तांकि उन्हें अनुचित छेड़-छाड़ और प्रदूषण से बचाया जा सके। समय के साथ जलस्रोत पुनर्भरण विधियों की यह समृद्ध परंपरा जिसमें पारंपरिक ज्ञान और धार्मिक विश्वास का सम्मिश्रण है, का क्षरण हो गया है जिसके परिणामस्वरूप उत्तराखंड के गांवों में पीने योग्य पानी के संकट की गंभीर समस्या सामने आ रही है। गांवों के घटते झरनों की चिंता नीति आयोग की रिपोर्ट “भारतीय हिमालयी क्षेत्र के सतत विकास में योगदान देने वाली एक सारांश रिपोर्ट (2018)” में प्रतिध्वनित हुई। रिपोर्ट में कहा गया है कि हिमालय के लगभग 50 लाख जलस्रोतों में से एक तिहाई सूख रहे हैं और आधे से अधिक में पानी के बहाव में गिरावट देखी गई है। यह गंभीर चिंता का विषय है इसलिए उन्होंने सुझाव दिया है कि हमें एक नए प्रतिमान का चयन करना चाहिए जो वाटरशेड और एक्वीफर्स को मिलाकर एक स्प्रिंग-शेड बनाता हो। हिमालय पर्वतमाला अत्यधिक वलयित (फॉल्डेड) और भ्रंशित (फॉल्टेड) हैं, जिसके कारण सतही जल प्रवाह की दिशा (वाटरशेड सीमाओं द्वारा परिभाषित), आमतौर पर उप-सतह भूवैज्ञानिक सीमा स्थितियों का पालन करती है जो स्रोतों के पानी की गति को निर्धारित करती हैं। पहले के जल संरक्षण कार्यक्रम काफी

हद तक वाटरशेड की अवधारणा पर आधारित थे, जो मुख्य रूप से ढलानों पर सतही जल के प्रवाह के लिए जिम्मेदार होते हैं। स्रोतों के पानी (भूजल) की गति विभिन्न कारकों (जैसे, उपसतह भूविज्ञान, फ्रैक्चर की प्रकृति और वितरण, ढलान) द्वारा नियंत्रित होती है। इसलिए, स्रोतों के पुनर्भरण के लिए वाटरशेड की पारंपरिक अवधारणा उस पानी के लिए जिम्मेदार नहीं हो सकती है जो वाटरशेड की सीमाओं से दूर बहती है। इसलिए, नीति आयोग का विचार है कि हिमालय के स्रोतों के पुनरुद्धार के लिए, हमें स्पिंग-शेड (अक्सर एक से अधिक जलागमों को समाहित करते हुए) दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए, जिसके लिये हमें जल पुनर्भरण क्षेत्र और जल निर्वहन क्षेत्र को जानना आवश्यक है।

उच्च और ट्रांस हिमालय में बर्फ पिघलती है और निचले स्थानों पर हिमगह्वर हिमनद गाँव की धाराओं को पोषित करते हैं। पहले से ही इस बात के संकेत हैं कि हिमनदों से पोषित धाराओं से निकलने वाले पानी में न केवल गिरावट की

प्रवृत्ति दिखाई दे रही है, बल्कि कई बार यह अत्यधिक अप्रत्याशित भी है। इससे ट्रांस हिमालयी गांवों में खाद्य सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है क्योंकि इन धाराओं से अनियमित जल आपूर्ति के कारण स्थानीय सिंचाई प्रणाली विफल हो रही है। उत्तराखंड के ट्रांस हिमालयी गांवों को बर्फ के लिए पानी का संचयन करके अपनी जल आपूर्ति के निर्वाह के लिए एक अलग दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता होती है, जैसा कि लेह शहर के एक स्थानीय निवासी चेवांग नोरफेल द्वारा प्रदर्शित किया गया है। उन्होंने कृत्रिम तालाबों में धारा प्रवाह को रोककर कृत्रिम हिमनद बनाने के नेक विचार का सुझाव दिया ताकि सर्दियों में यह जम जाए और छोटी बर्फ की चादरें बन जाएं। यह जमी हुई चादरें गर्मी के दिनों में ग्रामीणों को सिंचाई का पानी उपलब्ध कराती है। इस प्रयोग के परिणाम काफी उत्साहजनक हैं और इसे उत्तराखंड के ट्रांस हिमालय क्षेत्र में भी दोहराया जाना चाहिए।

जलविद्युत परियोजनाएं: जलविद्युत विश्व भर में बिजली उत्पादन का लगभग 16% है, लेकिन कई



चित्र - 8: पिंडर नदी घाटी के धरातलपर प्राकृतिक अवसाद (खाल) वसंत पुनर्भरण तालाब के रूप में कार्य करता है। इस तरह के गड्ढों का उपयोग ग्रामीणों द्वारा अपने स्रोतों को रिचार्ज करने के लिए बड़े पैमाने पर किया जाता था। एक परंपरा जो धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही है।

पहाड़ी दशों में यह 100% के करीब है (आई. एच. ए., 2018)। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में, हिमनदों और बर्फ आच्छादित क्षेत्रों से अपवाह में परिवर्तन होने से जलविद्युत संचालन प्रभावित होने की सम्भावना है। भारत में, जलविद्युत संयंत्रों के लिए कई घाटियों में आवश्यक बर्फ और हिमनदों के अपवाह में गिरावट आने का अनुमान है। उत्तराखंड हिमालय में जलविद्युत परियोजनाओं पर रवि चोपड़ा समिति (2014) की रिपोर्ट के अनुसार, सरकार 450 जलविद्युत परियोजनाओं का निर्माण करके अपनी नदियों से 27,000 मेगावाट संभावित जल विद्युत का दोहन करने की योजना बना रही है। वर्तमान में 3624 मेगावाट की कुल स्थापित क्षमता वाली 92 परियोजनाएं चालू की गई हैं और 38 परियोजनाएं निर्माणाधीन हैं। यदि हम उत्तराखंड में प्रस्तावित जल विद्युत परियोजनाओं के वितरण की प्रकृति की जांच करते हैं, तो लगभग 22 पैराग्लेशियल जोन (हिमनद द्वारा खाली किए गए क्षेत्रों) में 3000 मीटर ऊंचाई से ऊपर की योजना बनाई गई है, 44 योजनाएं 3000 और 2500 मीटर (पैराग्लेशियल और विंटर स्नोलाइन जोन के बीच) के बीच हैं। जबकि 54 योजनाओं को 2500 और 2000 मीटर ऊंचाई (शीतकालीन बर्फ रेखा के क्षेत्र के आसपास) के बीच प्रस्तावित किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि परियोजनाएं बड़े पैमाने पर पैराग्लेशियल प्रक्रिया (ऊपर चर्चा की गई) के प्रभुत्व वाले उच्च हिमालयी क्षेत्र में स्थापित होंगी। यह देखते हुए कि हिमालय में पैराग्लेशियल क्षेत्र बढ़ती अस्थिरता का अनुभव कर रहे हैं, जलविद्युत परियोजनाओं पर पैराग्लेशियल तलछट जुटाने के संभावित प्रभाव को एकीकृत करने का प्रावधान किया जाना चाहिए।

कृषि उत्पादकता: ऊंचे पहाड़ों ने सदियों से कृषि आधारित आजीविका का समर्थन किया है। ग्रामीण समुदाय फसल रोपण के लिये मिट्टी की नमी



चित्र-9. यमुना घाटी में सरनुल गांव अभी भी नाले से अपने खेत की सिंचाई करने में सक्षम है, जो ऊपरी जलग्रहण से पानी प्राप्त करता है जो पर्याप्त रूप से जंगल से आच्छादित है और ग्रामीणों द्वारा अच्छी तरह से संरक्षित है।

के पर्याप्त स्तर पर निर्भर होते हैं, जो सिंचाई के पानी से प्राप्त होता है जिसमें वर्षा जल की धाराएँ, हिमनद और हिमपात शामिल हैं (चित्र 9)। इस प्रकार, उच्च ऊंचाई वाले पर्वतीय समुदाय क्रायोस्फीयर में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति बेहद संवेदनशील हैं (रसूल और मोल्डेन, 2019)। इन अवलोकनों से संकेत मिलता है कि हिमनदों के जल्दी पिघलने के कारण सिंचाई के लिए आवश्यक होने पर धारा प्रवाह नहीं होता है। इससे कई पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि की पैदावार में कमी आई है। सिंचाई के पानी की उपलब्धता में बदलाव के कृषि पर प्रभाव के अलावा, नेपाल हिमालय में यह देखा गया है कि बर्फ के आवरण में कमी से मिट्टी की नमी पर इसके प्रत्यक्ष प्रभावों ने कृषि उत्पादकता को प्रभावित किया है। बढ़ते हवा के तापमान से फसल के वाष्पीकरण में वृद्धि होती है, जिससे फसल उत्पादन में उत्तम उपज बनाए रखने के लिए पानी की मांग भी बढ़ जाती है।

कम पानी की आपूर्ति से निपटने के लिए, नेपाल के कृषि क्षेत्र में लगातार गिरावट आ रही है। सिंचाई प्रणालियों के भीतर अनुकूलन प्रतिक्रियाओं में नई सिंचाई तकनीकों को अपनाना या मौजूदा

प्रौद्योगिकियों को उन्नत करना, जल संरक्षण उपायों, जल भंडारण के बुनियादी ढांचे का निर्माण, और फसल पैटर्न में बदलाव आदि शामिल हैं। इसी तरह, नेपाल में ग्रीनहाउस वाष्पीकरण और पाले से होने वाले नुकसान को कम करते हैं, हालांकि सीमित संसाधनों का होना इन गतिविधियों के लिए एक बाधा है। प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक समय में, जलवायु परिवर्तन ने लोगों को नई प्रतिरोधी फसलों को अपनाने के लिए मजबूर किया—कांस्य युग हड़प्पा सभ्यता में इसका एक उदाहरण देखा जा सकता है। पहले से ही लोग कई क्षेत्रों में अनुकूलन प्रतिक्रिया के रूप में नई फसलों और किस्मों के साथ प्रयोग कर रहे हैं। उत्तर पश्चिम भारत में किसानों ने दाल और सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि दर्ज की है, जो मनुष्य के आहार को महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रदान करते हैं, सरकारी वाटरशेड सुधार कार्यक्रमों में भागीदारी कर, जो सिंचाई के पानी की उपलब्धता में कमी को दूर करने में मदद करते हैं, कृषि सम्बन्धित आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सकती है, हालांकि इन कार्यक्रमों की गरीब परिवारों तक सीमित पहुंच है।

सारांश: हिमनद जलवायु परिवर्तन के संवेदनशील रिकॉर्डर हैं और गर्म जलवायु का प्रत्यक्ष संकेत प्रदान करते हैं। यद्यपि इनका प्रतिक्रिया देने का समय अभी भी अनिश्चित है, फिर भी यह बताया गया है कि बड़े हिमनदों की तुलना में छोटे हिमनद (<5 किमी) बहुत आसानी से प्रतिक्रिया देते हैं। मौजूदा आंकड़े पिछले कुछ दशकों के दौरान दुनिया भर में कई हिमनदों के पीछे हटने की ओर इशारा करते हैं। हालाँकि, जलवायु परिवर्तन के प्रोजेक्शन के संबंध में हिमनदों के स्वास्थ्य के प्रति अधिक निष्चित अनुमानों के लिए बहु-विषयक और बहु-कालिक दृष्टिकोण का उपयोग करते हुए ठोस प्रयासों की आवश्यकता होगी। इसके लिए, हिमालयी क्षेत्र में व्यापक भौगोलिक और जलवायु

क्षेत्र को दृष्टिगत करने वाले कम से कम दस बेंचमार्क हिमनदों को दीर्घकालिक निगरानी और वैज्ञानिक जांच के लिए चुना जाना चाहिए।

अतीत और हाल की बाढ़ की घटनाओं पर किये गये सीमित अध्ययनों से संकेत मिलता है कि वे दो प्रमुख प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं अर्थात चरम मौसम की घटनाओं के दौरान पैराग्लेशियल तलछट के जमाव और नदियों पर भूस्खलन से बने बांधों के टूटने के कारण है। जलवायु परिवर्तन परिदृश्यों के तहत, यह अनुमान लगाया जा रहा है कि पैराग्लेशियल जोन से तलछट का जमाव बढ़ने की संभावना है जिससे निचली घाटी में महत्वपूर्ण विनाश हो सकता है जैसा कि जून 2013 केदारनाथ आपदा और हाल ही में 7 फरवरी 2021 को ऋषि गंगा बाढ़ के दौरान देखा गया था। इसलिए, पैराग्लेशियल वातावरण की संवेदनशीलता को देखते हुए, समकालीन जलवायु परिवर्तन के प्रभाव गंभीर होने की संभावना है। हिमनदों के पीछे हटने और पैराग्लेशियल लैंडस्केप शिथिलीकरण के बीच स्पष्ट संबंध है, जो कि तलछट बहाव और पर्वतीय परिदृश्यों के भीतर भू-आकृति परिवर्तन द्वारा मापा जाता है। हालाँकि, इस बात पर बहुत कम विचार किया गया है कि वर्तमान में चल रहे जलवायु परिवर्तन से पैराग्लेशियल वातावरण कैसे विकसित होगा और कैसे निचली घाटियों को प्रभावित करेगा।

पर्वतीय भू-खतरों जैसे रॉकफॉल्स और भूस्खलन को जलवायु वार्मिंग और जी.एल.ओ.एफ. के लिए पैराग्लेशियल प्रतिक्रियाओं के महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक माना जा सकता है। हिमालय के कई क्षेत्रों में प्रोग्लेशियल झील क्षेत्र में परिवर्तन की निगरानी अब जी.एल.ओ.एफ. के खतरे के कारण की जा रही है, जो संभावित विनाशकारी बाढ़ उत्पन्न कर सकते हैं। जी.एल.ओ.एफ. की घटनाओं की भविष्यवाणी करना मुश्किल है, हालांकि भविष्य में जी.एल.ओ.

एफ. के और अधिक प्रबल होने की संभावना है।

मॉनसून के प्रभुत्व वाली हिमालयी घाटियों में, जलवायु सिमुलेशन मॉडल चरम मौसम की घटनाओं की बढ़ती आवृत्तियों को इंगित करता है। इस तरह की घटनाओं के पैराग्लेशियल जोन में पीटी -2 को पार करने की संभावना है, परिणामस्वरूप अस्थिर पैराग्लेशियल तलछट का बड़े पैमाने पर जमाव होगा और बिल्डअप संरचनाओं को गंभीर नुकसान पहुंचाएगा जैसा कि मंदाकिनी घाटी में जून 2013 और हाल ही में ऋषि/धौली गंगा घाटी में की घटनाओं के दौरान देखा गया था।

कम्प्रेसनल टेक्टोनिक्स के परिणामस्वरूप, सामान्य रूप से हिमालय और विशेष रूप से उत्तराखंड हिमालय में भूकंप आने का खतरा है और मध्य हिमालय (उत्तराखंड) में एक बड़ा भूकंप आने की संभावना है। भले ही भूकंप की भविष्यवाणी की गई हो या नहीं, वस्तुनिष्ठ रूप से एक भविष्यवाणी जोखिम कारक को नहीं बदल सकती है, बल्कि यह जोखिम की प्रकृति के बारे में अधिक जानकारी प्रदान करती है। इस तथ्य को देखते हुए कि उत्तराखंड हिमालय में जनसंख्या घनत्व में भारी उछाल है, जो भविष्य में आने वाले किसी भी भूकंप से होने वाले नुकसान को काफी बढ़ा सकता है। इसलिए, यह आवश्यक है कि न्यूनीकरण (मीटीगेशन) योजना को लागू करने के लिये लघु या दीर्घकालिक पूर्वानुमानों

की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। हम अभी से भूकंप की उथल-पुथल की चपेट में आने वाले इलाकों के सीमांकन के साथ इस दिशा में शुरुआत कर सकते हैं। घरों (व्यक्तिगत और समुदाय) को भूकंप प्रतिरोधी प्रौद्योगिकियों के साथ मजबूत किया जाना चाहिए। इसके अलावा, हमारे पास भूकंप के बारे में विचार है कि ऐसी घाटियों को स्पष्ट रूप से सीमांकित किया जाना चाहिए, विशेष रूप से उन धाराओं को जिनकी भूकंप से उत्पन्न ढलान अस्थिरता से प्रभावित होने की संभावना है। ऐसी घाटियों में रहने वाले लोगों को सम्बन्धित खतरे के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए ताकि वे संभावित भूस्खलन और अचानक बाढ़ के खतरों वाले क्षेत्रों में घर बनाने से बच सकें। यह निश्चित रूप से भयभीत होने की नहीं बल्कि “भूकंप के साथ रहने” की अवधारणा है जिसे हमारे पूर्वजों ने सदियों से अपनाया था।

जलवायु परिवर्तन गांव के पानी के स्रोतों को भी प्रभावित कर रहा है और इलाके की अल्प समझ के साथ, वहन क्षमता पर वैज्ञानिक ऑकड़ों की कमी, प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता, भूमि उपयोग, भूमि आवरण परिवर्तन, आदि गांव के स्रोतों के सूखने की प्रक्रिया को तेज कर रहे हैं। हाल ही की एक रिपोर्ट के अनुसार यह प्रक्रिया पहाड़ों में पहले से ही प्रचलित पलायन को तेज कर सकती है, और लंबी अवधि में विभिन्न वर्गों, समूहों और निवासियों



समुदायिक महोत्सव की योजना बनाने के लिए सामुदायिक केन्द्र में एकत्र नीति घाटी महिला परिषद (धौलीगंगा) की महिलायें

के बीच कई संघर्ष उत्पन्न हो सकते हैं। हालांकि पाईपलाइन के जरिए गांवों को निर्बाधित जलापूर्ति करने की महत्वाकांक्षी योजना है। भारत सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम (एन.आर.डी. डब्ल्यू.पी) के माध्यम से ग्रामीण आबादी को पेयजल उपलब्ध कराने के लिए लगभग 90,000 करोड़ रुपये आवंटित किये हैं। परन्तु डर यह है कि अगर हमारे पास स्प्रिंग शेड पुनर्भरण क्षेत्रों के स्पष्ट सीमांकन के साथ पारिस्थितिक, भू-वैज्ञानिक डेटा का आधार नहीं होगा तो हम इंजीनियरिंग के बुनियादी ढांचों जैसे— संग्रह तालाब बनाने, पाइपलाईन बिछाने, आदि द्वारा पुनर्भरण और निर्वहन क्षेत्रों के बीच के नाजुक संतुलन को खराब कर सकते हैं। हालांकि यह काफी प्रभावशाली लग रहा था कि हर घर में पानी का नल होगा, लेकिन हमारे अनुभव से पता चलता है कि जब तक हम रिचार्ज और डिस्चार्ज दोनों क्षेत्रों को नहीं समझते, वांछित परिणाम प्राप्त करना मुश्किल होगा। सी.ए.जी. ने अपनी 2018 की रिपोर्ट में पहले ही भारत सरकार की इस महत्वाकांक्षी और अत्यंत महत्वपूर्ण पहल की योजना और इसके क्रियान्वयन में कुछ विसंगतियों की ओर इशारा किया था।

हमें स्वच्छ ऊर्जा की आवश्यकता है, और राष्ट्र के आर्थिक विकास के लिए हिमालयी नदियों की जलविद्युत क्षमता का उपयोग करना भी चाहिए। परन्तु हम इस क्षेत्र की अनूठी जैव विविधता के संरक्षण के साथ-साथ भू-वैज्ञानिक और भू-आकृति संबंधी सीमा की स्थिति की अनदेखी नहीं कर सकते। जलविद्युत परियोजनाओं की व्यवहार्यता और दीर्घायु के लिए तथा नदी के व्यवहार को समझने और बैराजों, बांधों और संबंधित बुनियादी ढांचे की सुरक्षा के लिए एक पद्धति तैयार करने के लिए बाढ़ का दीर्घकालिक ऑकड़ें महत्वपूर्ण हैं। हिमालयी क्षेत्र में, लंबे समय तक बाढ़ के अभिलेखों की कमी है और इसलिए, अभिलेखों का विस्तार करने के लिए, पिछली बाढ़ के तलछटी साक्ष्य

— सुस्त पानी/पुरातन—बाढ़ के जमाव आदि का उपयोग किया जाता है। जलवायु परिवर्तन एक वास्तविकता बन गया है और ग्लोबल वार्मिंग के आवेगों को पहले से ही हिमालयी क्रायोस्फीयर में दर्ज किया जा रहा है। ली इत्यादि, (2022) द्वारा नेचर जियोसाइंस में हाल ही में प्रकाशित एक अध्ययन में चेतावनी दी गई है जो कि पैराग्लेशियल जोन की स्थिरता पानी की मात्रा और समय और निचली घाटियों में अप्रत्याशित तलछट प्रवाह दोनों के संदर्भ में है। अध्ययन में आगे चेतावनी है कि बड़ी मात्रा में जमा होने वाली तलछट जलाशयों को भर सकती है, बांधों की विफलता का कारण बन सकती है और बिजली टर्बाइनों को ध्वस्त कर सकती है। इस हेतु टिकाऊ तलछट प्रबंधन समाधानों की सिफारिश की जाती है जो एशियाई उच्च पर्वतों में जलवायु परिवर्तन—लचीलापन लाने हेतु बांधों और जलाशयों के रखरखाव के लिये एक दूरदर्शी डिजाइन तैयार करने में मदद कर सकते हैं। उपरोक्त सुझाव इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए महत्वपूर्ण हैं कि उत्तराखंड हिमालय में जून 2013 और फरवरी 2021 को अचानक आयी बाढ़ के दौरान बांधों और बैराजों को हुए नुकसान के मामले में बुरी तरह प्रभावित था। यद्यपि हिमालय में बाढ़ उच्च तीव्रता वाली वर्षा की घटना से उत्पन्न होती है, लेकिन उच्च ऊंचाई (पेरिग्लेशियल क्षेत्रों) में जी.एल.ओ.एफ. हाल के दिनों में एक संभावित खतरा है। यदि नदियाँ तलछट अधिशेष क्षेत्रों (पैराग्लेशियल) से होकर बहती हैं, तो बाढ़ की भयावहता काफी बढ़ जाती है।

जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न खतरा हिमालय के भू-भाग पर मंडरा रहा है। भविष्य की प्रवृत्ति का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न वाटरशेडों से तापमान और वर्षा में स्थानिक और लौकिक परिवर्तनों का आकलन प्रलेखित किया जाना चाहिए। मौसम संबंधी आंकड़े मौजूदा फसलों के पैटर्न की प्रतिक्रिया का आकलन करने और

वैज्ञानिक तरीके खोजने में मदद करेंगे। उदाहरण के लिए, यदि मौजूदा फसल पैटर्न को स्थानीय खपत वाली फसल से बदलने की आवश्यकता है जो एक स्थिर आमदनी का प्रवाह पैदा कर सकती है जैसे कि वर्षा आधारित कृषि के क्षेत्रों में दालें और उन क्षेत्रों में सब्जियां जहां पानी की उपलब्धता मौजूद है। हालांकि, वर्तमान जलवायु परिस्थितियों में फसलों के पैटर्न को प्रभावित करने वाले मापदंडों की आधारभूत जानकारी और तापमान, आर्द्रता, वर्षा और हिमपात में बदलाव होने पर उन्हें कैसे शामिल किया जाए यह जानना बहुत आवश्यक है। नए उपाय प्रस्तावित करने से पहले इन आंकड़ों का मूल्यांकन पारंपरिक कृषि पद्धतियों के साथ किया जाना चाहिए। जलवायु परिवर्तन की घटना हिमालय के पारिस्थितिकी तंत्र सेवा को जोड़ने के लिए एक गंभीर खतरे के रूप में उभरी है। जलवायु नियामक के रूप में अपनी भूमिका के

अलावा, चरम मौसम की घटनाओं की आवृत्ति में वृद्धि, वनाच्छादन की दर में परिवर्तन, प्रजातियों के प्रवास, विदेशी प्रजातियों के आक्रमण और स्थानिक प्रजातियों के लिए खतरे ने एक पारिस्थितिकी तंत्र सेवा प्रदाता के रूप में हिमालय की भूमिका को चुनौती दी है। इससे हिमालय क्षेत्र में रहने वाले समुदायों विशेषकर महिलाओं की आजीविका के मुद्दों पर गंभीर खतरा पैदा हो गया है। यह चिंता यू.पी.ए.पी.सी.सी. रिपोर्ट (2014) में स्पष्ट रूप से प्रतिध्वनित हुई है, जिसमें पहाड़ों में महिलाओं के लिए बहुत चिंता दर्शायी गई है क्योंकि इनकी जलवायु परिवर्तन से सबसे ज्यादा प्रभावित होने की संभावना है। उपरोक्त के मद्देनजर, सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों को जेंडर-रिस्पॉन्सिव होना चाहिए ताकि भारतीय हिमालयी क्षेत्र में कमजोर महिलाओं को लाभ मिल सके।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, ए. और चक, ए. (1991)। बाढ़, बाढ़ का मैदान और पर्यावरण संबंधी मिथक। भारत के पर्यावरण की स्थिति: एक नागरिक रिपोर्ट। विज्ञान और पर्यावरण केंद्र दिल्ली।
2. आर्मस्ट्रांग, आर. एल. (2010)। हिंदू कुश-हिमालयी क्षेत्र के हिमनद, हिंदू कुश, काराकोरम, पामीर और टीएन शान पर्वत श्रृंखलाओं में हिमनदों के पिघलने/पीछे हटने के बारे में विज्ञान का सारांश; इंटरनेशनल सेंटर फॉर इंटीग्रेटेड माउंटन डेवलपमेंट आईसीआईएमओडी, नेपाल, आईएसबीएन 9789291151738।
3. इंटरनेशनल हाइड्रोपावर एसोसिएशन (आई.एच.ए.), हाइड्रोपावर स्टेटस रिपोर्ट 2018, पी. 53।
4. ओरलेमन्स, जे. (2005)। 169 हिमनदों के रिकॉर्ड से जलवायु संकेतों का ऑकलन। विज्ञान, 308, 675–677।
5. कुमरी, जी. और शोन, एस. के. (1970)। रिवर वैली प्रोजेक्ट्स पर संगोष्ठी की कार्यवाही में रुड़की विश्वविद्यालय रुड़की, पी. 7।
6. जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना के तहत हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र (NMSHE) को बनाए रखने के लिए राष्ट्रीय मिशन (2010)। विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार। पी. 51।
7. जलवायु परिवर्तन पर उत्तराखंड कार्य योजना, संकट को अवसर में बदलना, उत्तराखंड सरकार (2014), 229।
8. बिल्हम, आर., लार्सन, के.पी., फ्रीमुलर, जे.टी. इत्यादि, (1997)। नेपाल हिमालय में वर्तमान अभिसरण का जीपीएस मापन: प्रकृति, वी। 386, पी। 61–64, डीओआई: 10.1038 / 386061ए0।

9. भट्टाचार्य, ए. इत्यादि, (2016)। रिमोट सेंसिंग डेटा का उपयोग करके 1965 से 2015 तक गंगोत्री हिमनद, गढ़वाल हिमालय का समग्र मंदी और सामूहिक बजट। जर्नल ऑफ ग्लेशियोलॉजी, डीओआई: 10.1017/जॉग.2016.96।
10. नेगी, पी.एस., पांडेय, सी.पी., सिंह, एन. (2019)। भारत के उत्तर पश्चिमी हिमालय के गंगोत्री हिमनद घाटी की परिवेशी वायु में ब्लैक कार्बन एरोसोल। वायुमंडलीय पर्यावरण, <https://doi.org/10.1016/j.atmosenv.2019.116879>.
11. नीति आयोग रिपोर्ट (2018)। "भारतीय हिमालयी क्षेत्र के सतत विकास में योगदान देने वाली एक रिपोर्ट का सार. 58.
12. यान, एल.बी. और लियू, एक्स. डी. (2014)। क्या हाल के वर्षों में तिब्बती पठार पर जलवायु का गर्म होना रुक गया है या जारी है? पृथ्वी, महासागर और वायुमंडल। विज्ञान।, वी.1, पी.पी. 13–28।
13. रामनाथन, वी. और कारमाइकल, जी. (2008). ब्लैक कार्बन के कारण वैश्विक और क्षेत्रीय जलवायु परिवर्तन. नेचर जियोसाइंस, 1, 221–227।
14. राणा, एन. इत्यादि, (2021). भारत, मध्य हिमालय, निचली धौली गंगा घाटी में 7 फरवरी 2021 की फ्लैश फ्लड का प्रारंभिक आकलन। जे अर्थ सिस्ट. साइन्स (2021) 130:78, <https://doi.org/10.1007/s12040-021-01608-zl>
15. राणा, एन. इत्यादि, (2013)। अलकनंदा घाटी में हालिया और पूर्व बाढ़ के कारण एवं परिणाम। कुर विज्ञान। 105:1209–1212.
16. रसूल, जी. और मोल्डेन, डी. (2019). पर्वतीय हिममंडल परिवर्तन के वैश्विक सामाजिक और आर्थिक परिणाम। फ्रॉन्ट. इनवार. साइन्स, <https://doi.org/10.3389/fenvs.2019.00091>
17. ली, डी. इत्यादि, (2022)। हाई माउंटेन एशिया हाइड्रोपावर सिस्टम को जलवायु-संचालित परिदृश्य अस्थिरता से खतरा है। नेचर जियोसाइंस, <https://doi.org/10.1038/41561022.00953.y>।
18. वासन, आर. जे. इत्यादि, (2013)। ऊपरी गंगा जलग्रहण, मध्य हिमालय, भारत में बड़ी बाढ़ का 1000 साल का इतिहास। चतुर्धातुक विज्ञान समीक्षा 77; 156–166.
19. साबिन, टी.पी. और कृष्णन, आर. (2020)। हिमालयी जलवायु परिवर्तन। आर. कृष्णन, जे. संजय, सी. ज्ञानसीलन, एम. मुजुमदार, ए. कुलकर्णी और एस. चक्रवर्ती (संपादित) एसेसमेंट ऑफ क्लाइमेट चेंज ओवर द इंडियन रीजन। पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय (एम.ओ.ई.एस.), भारत सरकार की एक रिपोर्ट, 207–222।
20. सुंदरियाल वार्ड. पी. इत्यादि, (2015)। जून 2013 की वर्षा घटना के लिए इलाके की प्रतिक्रिया: गढ़वाल हिमालय, भारत के अलकनंदा और मंदाकिनी नदी घाटियों से साक्ष्य। एपिसोड 38: 179–188।
21. शर्मा, एस. इत्यादि, (2017)। पश्चिमी हिमालय, भारत में जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए होलोसीन बाढ़ और उनकी आत्मीयता। भू-आकृति विज्ञान, 2017, 290, 317–334।
22. हिमालय के हिमनद, (2021)। ड्राफ्ट विश्व बैंक रिपोर्ट। पी.पी. 236।
23. हॉलैंड, टी. एच. (1894)। गोहना लैंडस्लिप, गढ़वाल पर रिपोर्ट। लोक निर्माण विभाग में भारत सरकार के अभिलेखों से चयन: CCCXXIV (324)। सरकारी मुद्रण अधीक्षक का कार्यालय, कलकत्ता।

G.B. Pant Memorial Lectures

I

Dr. M.S. Swaminathan, Director, CRSARD,
Madras - 1991

II

Dr. T.N. Khoshoo, Jawaharlal Nehru Fellow, TERI,
New Delhi - 1992

III

Mr. V. Rajagopalan, Vice President, World Bank,
Washington - 1993

IV

Prof. U.R. Rao, Member, Space Commission,
New Delhi - 1994

V

Dr. S.Z. Qasim, Member, Planning Commission,
New Delhi - 1995

VI

Prof. S.K. Joshi, Vikram Sarabhai Professor, JNCASR,
Bangalore - 1996

VII

Prof. K.S. Valdiya, Bhatnagar Research Professor,
JNCASR, Bangalore - 1997

VIII

Prof. V.K. Gaur, Distinguished Professor, IIA,
Bangalore - 1998

IX

Prof. Y.H. Mohan Ram, INSA Senior Scientist,
University of Delhi, New Delhi - 2000

X

Prof. J.S. Singh, Emeritus Professor, BHU,
Varanasi - 2004

XI

Prof. Madhav Gadgil, Centre for Ecological Sciences,
IISc, Bangalore - 2005

XII

Dr. S.S. Handa, Ex-Director, PRL (CSIR),
Jammu - 2006

XIII

Dr. Lalji Singh, Director, CCMB, Hyderabad - 2007

XIV

Prof. Roddam Narasimha, Chairman, FMU,
JNCASR, Bangalore - 2008

XV

Dr. R.S. Tolia, Chief Information Commissioner,
Govt. of Uttarakhand, Dehradun - 2009

XVI

Prof. Raghavendra Gadagkar, CES & CCS, IISC,
Bangalore - 2010

XVII

Prof. V. Nanjundiah, JNCASR, Bangalore - 2011

XVIII

Dr. Kirit S. Parikh, IRADe, New Delhi & Former
Member Planning Commission - 2012

XIX

Prof. Jayanta Bandopadhyay, Former Prof. & Head,
IIM, Calcutta - 2013

XX

Prof. T.S. Papola, Institute for Studies in Industrial
Development, New Delhi - 2014

XXI

Dr. David Moulden, Director General, ICIMOD,
Nepal - 2015

XXII

Dr. Vijay Raghavan, Secretary, Department of
Biotechnology, New Delhi - 2016

XXIII

Prof. S.P. Singh, Former Vice-Chancellor, HNB
Garhwal University, Uttarakhand - 2017

XXIV

Prof. P.S. Roy, Former Director, Indian Institute of
Remote Sensing, Dehradun - 2018

XXV

Prof. Raman Sukumar, Professor of Ecology, Indian
Institute of Science, Bangalore - 2019

XXVI

Prof. Tej Pratap, Vice Chancellor, G.B. Pant
University of Agriculture and Technology,
Pantnagar - 2020

XXVII

Prof. R. Raghavendra Rao, Chairman, Karnataka
State Environmental Appraisal Committee - 2021